IJAER/Dec-Jan 2014/Volume -4/Issue-1/Article No-1/1-6 ISSN: 2278-9677

International Journal of Arts & Education Research

ग्रामीण विकास के लिये पूर्वी एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश में कृषि की समस्याओं का संक्षिप्त अवलोकन

Vikram Singh
Research Scholar
SunRise University
Alwar, Rajasthan

Dr.Vishnu Kumar Tomar
Supervisor
SunRise University
Alwar, Rajasthan

सारः—

वर्तमान युग प्रतिस्पर्धा का युग है। प्रत्येक राष्ट्र दूसरे राष्ट्रों से प्रतिस्पर्धा कर आगे जाना चाहते हैं। ऐसे में यह आवश्यक है कि प्रत्येक राष्ट्र आत्मनिर्भर व विकसित हो। प्राचीन काल में भारत एक सम्पन्न एवं प्रगतिशील राष्ट्र था। अंग्रेजों के भारत आगमन के पश्चात् देश का अनेक प्रकार से व्यवसायिक, राजनीतिक व आर्थिक शोषण होने लगा, जिससे भारतीय अर्थव्यवस्था पर बुरा प्रभाव पड़ा। ब्रिटिश शासन के दौरान भारतीय कृषि की अनेक प्रकार से उपेक्षा की गयी, जिससे हमारे देश व प्रदेश की कृषि की स्थिति अत्यन्त जर्जर हो गयी। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय अर्थव्यवस्था एक पिछड़ी हुई तथा गतिहीन अर्थव्यवस्था थी, जिसके विकास हेतु 1 अप्रैल 1951 को नियोजन कार्यक्रम प्रारम्भ किए गए, जिसके फलस्वरूप देश में व्याप्त दीर्घकालीन गतिहीनता समाप्त हुई तथा देश आर्थिक विकास के मार्ग पर चल पड़ा। आधुनिक समय में प्रत्येक क्षेत्र का यह प्रमुख उद्देश्य है कि वह अपनी अर्थव्यवस्था को तीव्र गति से विकसित करें, किन्तु विकास की क्रिया किसी एक क्रिया पर निर्भर न होकर अनेक तत्वों पर निर्भर करती है। नियोजन काल में कृषि को प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में विशेष स्थान दिया गया क्योंकि कृषि ही देश की अधिकांश जनसंख्या की आजीविका का साधन है। उत्तर प्रदेश भारत का एक अभिन्न अंग है। इसे भारत के हृदय प्रदेश की संज्ञा दी जाती है। भारत के एक अभिन्न अंग व हृदय प्रदेश के आर्थिक विकास व कृषि विकास को यदि उपेक्षित किया गया तो इसका दुष्प्रभाव सम्पूर्ण भारतीय अर्थव्यवस्था पर पड़ेगा। आर्थिक दृष्टि से उत्तर प्रदेश को चार भागों में विभाजित किया गया है। हमारे अध्ययन का क्षेत्र पूर्वी एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश है, जिसमें से पूर्वी उत्तर प्रदेश का आर्थिक विकास व कृषि विकास पश्चिमी क्षेत्रों की अपेक्षा काफी पिछड़ा हुआ है। पूर्वी एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश की अर्थव्यवस्था कृषि आधारित है। इसलिए प्रदेश के आर्थिक विकास हेतु कृषि का विकसित होना अत्यन्त आवश्यक है। बिना कृषि के विकास के इन क्षेत्रों में न तो उद्योगों का विकास सम्भव है और न ही गरीबी को मिटाया जा सकता है। पूर्वी एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश में आजीविका का मुख्य साधन कृषि है। यद्यपि योजना काल में यहॉं की कृषि में सुधार हुआ है, किन्तु अभी भी कृषि अनेक समस्याओं से घिरी हुई है। पश्चिमी क्षेत्रों की तुलना में पूर्वी क्षेत्र कृषि समस्याओं से अपेक्षाकृत अधिक ग्रसित है। पूर्वी क्षेत्रों में कृषि विकास की स्थिति पश्चिमी क्षेत्रों की अपेक्षा काफी पिछड़ी हुई है। यद्यपि पश्चिमी क्षेत्र प्रदेश के सबसे अधिक कृषि विकसित क्षेत्र हैं, किन्तु यहॉं भी कृषि विकास की अनेक समस्याऍं विद्यमान हैं। यदि इस क्षेत्र को कृषि समस्याओं से मुक्ति मिल जाए तो यह क्षेत्र देश के प्रदेशों के मुख्य कृषि क्षेत्रों से भी अग्रणी स्थान प्राप्त कर सकता है।

प्रस्तावनाः—

कृषि प्रधान देश में कृषि की चुनौतियॉं आती ही रहती हैं। कभी मानसून की बेरूखी तो कभी मानसूनी का अतिरेक। आंशिक क्षेत्रों में पाला, ओला कोई नई बात नहीं है। इतिहास गवाह है कि 50 के दशक के रोग, कीट की महामारी ने तो कृषि के तंत्र को झकझोर कर रख दिया था। 'उत्तर प्रदेश के पूर्वी और पश्चिमी क्षेत्र में कृषि से सम्बन्धित परिस्थितियॉं हम सभी से छिपी नहीं हैं। बात किसानों के सन्दर्भ में कही जाय तो आज एक तो किसानों के पास खेती करने के लिए जमीन नहीं है, दूसरी तरफ बढ़ता हुआ भूक्षरण उन्हें प्राकृतिक रूप से भूमिहीन बना रहा है। किसान ही वह श्रेणी है जिसपर चारो तरफ से मार पड़ रही है। चाहे वह प्रकृति की हो, सरकारी नीति की हो अथवा बाजार की और किसान सब चुप—चाप सहने को विवश हैं। यह सब कुछ प्रदर्शित करता है कि प्रदेश में कृषि एवं किसानों के स्थिति अच्छी नहीं हैं और यहॉं बहुत से किसान देश के अन्य किसानों की तरह खेती में आ रही बहुत सी

मुश्किलों से परेशान खेती को मजबूरन छोड़ने की दुविधा में फॅसे हुए हैं। हालात चाहे प्राकृतिक हो या राजनैतिक अन्ततः किसानों को ही परेशानी महसूस हुई है।'

एक ओर शहरीकरण के कारण अतिरिक्त जोत पर विराम लग गया है, तो दूसरी तरफ नहरी क्षेत्रों में सिंचाई जल का सदुपयोग के कारण जल स्तर में वृद्धि होकर भूमि के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ा है। यह सर्वविदित है कि वर्षा जल का बड़ा हिस्सा संरक्षणतंत्र के आभाव में बहकर चला जाता है, न तो भूमिगत हो पाता है और न ही उसका बेहतर उपयोग। कृषकों को प्रायः दो प्रकार की स्थितियों का सामना करना पड़ता है, जो इसकी भावी योजनाओं पर व्यापक प्रभाव डालते हैं। इनमें से एक तो है जोखिम तथा दूसरा है अनिश्चितता। जब उत्पादन कार्य भावी घटनाओं की पूर्ण जानकारी के आधार पर किये जाते हैं तो योजना कार्य एवं निर्णय के बहुत कुछ सही होने की प्रत्याशा रहती है, परन्तु कृषि एक ऐसा व्यवसाय है, जिसमें भविष्य की घटनाओं के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता है। इस क्षेत्र के अधिकांश निर्णय एवं उत्पादन योजनाएं अनिश्चितता की स्थिति में अपनायी जाती हैं। फलतः इसमें जोखिम का अंश होता है। कृषि क्षेत्र में व्याप्त जोखित एवं अनिश्चितता कृषि को एक दलित उद्योग बना देती है।

'इस प्रकार कृषि व्यवसाय प्रकृति की अनिश्चितताओं यथा बाढ़, सूखा, ओलावृष्टि, आग, तूफान तथा कीड़े–मकोड़े एवं विभिन्न रोगों आदि से समय–समय पर गम्भीर रूप से प्रभावित होता है। इन अनिश्चिताओं से कृषि उत्पादन एवं कृषकों की आय में अनिश्चितता एवं अस्थायित्व का तत्व विद्यमान रहता है। ऐसी दशा में कृषक कभी–कभी अपनी उत्पादन लागत भी नहीं निकाल पाते, और उन्हें हानि उठानी पड़ती है। प्राकृतिक आपदा एवं अन्य कारणों से फसल खराब होने की स्थिति में कृषकों को अपनी वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु ऋण लेना पड़ता है, और जाने–अन्जाने में वे ऋण जाल में फॅस जाते हैं। इस प्रकार पूर्वी और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में कृषकों को इन समस्याओं के अतिरिक्त कुछ और अन्य समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जो निम्नलिखित हैं–

खाद की समस्याः–

पूर्वी और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में कृषि का एक महत्वपूर्ण स्थान है, किन्तु फिर भी यहॉ की उपज अन्य प्रदेशों की तुलना में कम है। इसके विभिन्न कारणों में से एक प्रमुख कारण भूमि की उर्वरा शक्ति के प्रति कृषकों की उदासीनता अत्यन्त प्रमुख है। यहॉ के कृषक लगातार फसलों के द्वारा भूमि की उर्वरा शक्ति का शोषण करते हैं, परन्तु पोषक तत्वों के रूप में भूमि को कुल वापस नहीं करते, जिसके कारण भूमि की उर्वरा शक्ति क्षीण हो जाती है। साथ ही साथ उत्पादिता भी घटने लगती है। कृषक कार्बनिक खाद का प्रयोग भी कम मात्रा में करते हैं, जबकि इनका प्रयोग सरलता से किया जा सकता है। भूमि की उर्वरा शक्ति का संरक्षण अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि उर्वरा शक्ति के संरक्षण के बिना उत्पादन एवं उत्पादिता में वृद्धि लाना सम्भव नहीं है। अनुकूलतम् उत्पादन तभी होगा जबकि भूमि का वैज्ञानिक ढंग से प्रयोग किया जाय और उसके आवश्यक तत्वों की पूर्ति होती रहे।'

'पूर्वी एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश में अन्य प्रकार की खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग विभिन्न प्रकार के कारणों से नहीं हो पाता है, जैसे– गरीबी के कारण अधिकांश किसान रासायनिक खाद नहीं खरीद पाते। धार्मिक विचारों एवं रीति–रिवाज पर आधारित अभिन्न रूचियों के फलस्वरूप मल–मूत्र एवं हड्डियों आदि का भी खाद के रूप में प्रयोग नहीं होता। हरी खाद भी आवश्यक मात्रा में उपलब्ध नहीं हो पाती है, क्योंकि साधारण किसान अपनी भूमि को खाद्यान्न जुटाने में लगा देते हैं। कई स्थानों में तो आवश्यक मात्रा में पानी उपलब्ध न होने के कारण उर्वरकों का प्रयोग सम्भव नहीं हो पाता। इसके अतिरिक्त कुछ स्थानों पर सस्ते ऋण की सुविधाएं न होने के कारण छोटे किसान खाद व उर्वरक खरीदने में असमर्थ रहते हैं। इस प्रकार विभिन्न कारणों से यहॉ की भूमि को पर्याप्त मात्रा में ठीक प्रकार की खाद नहीं मिल पाती है, जिससे इसकी उपजाऊ शक्ति बहुत कम हो गयी है। अतः इन क्षेत्रों में कृषि उत्पादन और उत्पादिता के निम्न स्तर का यह एक प्रधान कारण है।'

'कृषकों की अज्ञानता के कारण वे उर्वरकों का सही ढंग से प्रयोग नहीं कर पाते, जिससे भूमि पर इनका विपरीत दूरगामी प्रभाव पड़ता है। साथ ही साथ इनके अतिशय प्रयोग से भूमि की उर्वरता आगे चलकर कम होने लगती है। कृषकों द्वारा उर्वरकों के गलत प्रयोग, अनेक प्रकार के कीटों एवं जीवाणुओं के विकास को भी बल मिलता है, जिससे अनेक प्रकार की बीमारियॉ जन्म लेती हैं। इसके अतिरिक्त अत्यधिक रासायनिक उर्वरकों के गलत प्रयोग से भूमिगत जल प्रदूषित होने लगता है। इस जल को पीने से खास अवरोधन जैसी खतरनाक बीमारी जन्म लेने लगती है। इस प्रकार कृषकों की अज्ञानता के कारण भूमि की उर्वरा शक्ति कम होने एवं भूमि प्रदूषित होने से खेत का पारिस्थितिकी तन्त्र असंतुलित हो रहा है, जिसका प्रभाव उत्पादन पर पड़ रहा है।'

उर्वरकों के अधिक उपयोग में खर्च भी अधिक पड़ता है। कीटाणुनाशक और कवकनाशक औषधियॉ का व्यवहार बढ़ जाता है। इससे पैदावार की कीमत बढ़ जाती है, परन्तु उर्वरक अधिक मॅहगें होने के कारण विशेषकर

पूर्वी उत्तर प्रदेश में कृषक उनका प्रयोग नहीं कर पाते हैं, क्योंकि यहॉ के कृषकों की मुख्य समस्या निर्धनता भी है, जबकि पश्चिमी उत्तर प्रदेश के कृषक आसानी से उनका प्रयोग कर लेते हैं। अशिक्षा, अज्ञानता, निर्धनता इत्यादि का दुष्प्रभाव कृषकों पर पड़ता है, क्योंकि पश्चिमी उत्तर प्रदेश की तुलना में पूर्वी उत्तर प्रदेश में ये सभी समस्याएॅ अधिक पायी जाती हैं, और इन सबका प्रभाव कृषि उत्पादन पर पड़ता है। यही कारण है कि पूर्वी उत्तर प्रदेश की कृषि, पश्चिमी उत्तर प्रदेश की तुलना में अत्यधिक पिछड़ी एवं अल्पविकसित अवस्था में पायी जाती है।

विपणन की समस्याः–

'पूर्वी उत्तर प्रदेश, उत्तर प्रदेश का सर्वाधिक जनसंख्या वाला क्षेत्र है, जबकि पश्चिमी उत्तर प्रदेश का दूसरा स्थान है। यहॉ की अधिकांश जनसंख्या कृषि पर आधारित है। इसके बावजूद भी इन क्षेत्रों में स्वतन्त्रता प्राप्ति के इतने वर्षों के बाद भी कृषि विपणन व्यवस्था अनेक समस्याओं से ग्रसित है। यहॉ की ग्रामीण जनसंख्या का अधिकांश भाग खेती पर निर्भर करता है। अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किसान अपने कृषि पदार्थों का विक्रय करते हैं। कृषि उपज के विपणन के लिए अनेक व्यवस्थाएं होती हैं जैसे– गॉवों में बिक्री, स्थानीय बाजारों में बिक्री, मेले में बिक्री, सहकारी समितियों के माध्यम से बिक्री, सरकारी खरीद आदि। इन विभिन्न प्रकार की व्यवस्थाओं के बावजूद किसानों को अपनी उपज का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। विभिन्न सरकारी एवं गैरसरकारी व्यवस्थाओं के बावजूद भी कृषि विपणन व्यवस्थाओं में सन्तोषजनक गुणात्मक सुधार नहीं हुआ है। इस प्रकार असंतोषजनक विपणन व्यवस्था के कारण कृषकों को विवश होकर अपने घर पर या स्थानीय बाजारों में कम मूल्य पर अपनी उपज बेचना पड़ता है। सामान्यतया उपज मण्डियों तक पहुंच नहीं पाती और कृषकों को बाजार कीमतों की जानकारी नहीं रहती। अतः उन्हें अपनी उपज का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है।' कृषि के विकास के लिए कृषि विपणन व्यवस्था का सुदृढ़ होना एक अनिवार्य शर्त है।

सिंचाई की समस्याः–

'प्रादेशिक अर्थव्यवस्था का मूल आधार कृषि है। कृषकों को अधिकांशतः वर्षा पर निर्भर रहना पड़ता है। उत्तर प्रदेश में वर्षा का क्षेत्रीय मौसमी और वार्षिक वितरण अत्यन्त असमान है। विभिन्न क्षेत्रों में वर्षा का वास्तविक स्तर सामान्य स्तर से पृथक होता है। कभी वार्षिक वास्तविक वर्षा का स्तर सामान्य स्तर से कम हो जाता है। अच्छे मानसून के समय फसलें सफलतापूर्वक पैदा की जा सकती है। इसलिए वर्षा जल हमारी अर्थव्यवस्था का एक सुदृढ़ आधार है। परन्तु इसकी मात्रा समय एवं वितरण की अनिश्चितता के कारण फसलें प्रायः अनावृष्टि अथवा अतिवृष्टि से प्रभावित होती रहती है। भारतीय मौसम विभाग के अनुसार यदि वार्षिक वर्षा का सामान्य स्तर 75 प्रतिशत से कम है तो अति गम्भीर सूखे की स्थिति कही जाती है और 50 प्रतिशत पर गम्भीर सूखे की स्थिति कही जाती है। सामान्यतया यह पाया गया है कि 4–5 वर्षों में एक बार सूखे की स्थिति उत्पन्न हो जाती है, परन्तु कभी–कभी यह स्थिति अत्यन्त कम और कभी–कभी अधिक हो जाती है। कभी–कभी लगातार कई वर्ष सूखे पड़ जाते हैं। सूखे का प्रभाव सभी किसानों पर पड़ता है। छोटे व सीमान्त किसान सूखे से सर्वाधिक प्रभावित रहते हैं। सूखे के कारण किसान व खेतिहर मजदूर बेरोजगार हो जाते हैं। कृषकों की लागत मिट्टी में मिल जाती है। इसके साथ ही साथ सरकार को भी आर्थिक हानि उठानी पड़ जाती है। अब तो यह स्थिति नहीं रही कि भारतीय कृषि मानसून का जुआ है। फिर भी मानूसन के ऊपर कृषि की निर्भरता को नकारा नहीं जा सकता है। यह कारण है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् राष्ट्रीय एवं प्रान्तीय सरकारों ने सिंचाई व्यवस्था को सर्वोपरि प्राथमिकता दी। लेकिन फिर भी यह नहीं का जा सकता है कि खेत एवं फसल को पर्याप्त मात्रा में सिंचाई सुविधा प्राप्त हो रही है। पूर्वी और और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में अभी भी सिंचाई की समस्या विद्यमान है।'

'विश्व का कोई भी ऐसा भाग नहीं जहॉ वर्षा की सभी विशेषताएॅ पायी जाती हो। इसलिए सिंचाई प्रणाली को योजना बनाना आवश्यक होता है, किन्तु पश्चिमी उत्तर प्रदेश की तुलना में पूर्वी उत्तर प्रदेश में उचित सिंचाई प्रणाली की योजना का आभाव है, जिससे फसलोत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इन क्षेत्रों में नहर एवं अन्य संरचनाओं का निर्माण तो हुआ, परन्तु सिंचनीय क्षेत्रों में जल की उचित वैज्ञानिक आपूर्ति की तरफ ध्यान न देने के कारण कृषकों को सिंचाई का पूरा–पूरा लाभ नहीं मिल पाता हैं। सिंचनीय क्षेत्र में जल आपूर्ति की तकनीक पर सिंचाई क्षमता निर्भर होती हैं, इन क्षेत्रों में उपयुक्त सिंचाई के लिए जल वितरण असमान है, जिससे यहॉ के कृषकों को सिंचाई की समस्या का सामना करना पड़ता है। सिंचाई जल को क्षेत्र के सभी भागों में आसानी से पहुंचने के लिए समतलीकरण के बाद एक हल्की सी ढलान का होना आवश्यक होता है, परन्तु यहॉ के कृषकों की अज्ञानता एवं अशिक्षित होने के कारण वे इन बातों को गहराई से नहीं लेते हैं और ये सिंचाई के उचित लाभ से वंचित रह जाते हैं।'

निम्न उत्पादकता की समस्याः–

'पूर्वी और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में कृषि उत्पादन कम होने का एक महत्वपूर्ण कारण यह भी है कि यहॉ के कृषक

उन्नतशील बीजों का प्रयोग नहीं करते हैं। वह अपने खेतों में उत्पन्न हुए फसल को ही बीज के रूप में प्रयोग करते हैं, जो अच्छी श्रेणी के नहीं होते हैं। प्रायः कृषक एक ही बीज को तीन–चार वर्षों तक प्रयोग में लाते हैं, जिस कारण उत्पादन कम प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त धनाभाव के कारण कृषक अच्छी और पर्याप्त मात्रा में रासायनिक खादों का प्रयोग नहीं कर पाते हैं। इसके अतिरिक्त गोबर का अधिकांश भाग ईधन के रूप में जला दिया जाता है क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में अन्य सस्ते ईधन का आभाव है। फलतः खेतों को पर्याप्त मात्रा में खाद नहीं मिलती जिससे उत्पादन की स्थिति अच्छी नहीं है।

अतिवृष्टि और अनावृष्टि भी यहॉ के कृषि को प्रभावित करती है। वर्षा कम होने के कारण उत्पादन भी कम प्राप्त होता है तथा उत्पादन की गुणवत्ता पर भी अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार अतिवृष्टि भी कृषि को अत्यधिक प्रभावित करती है। कभी–कभी अत्यधिक वर्षा के कारण पूरी की पूरी फसलें नष्ट हो जाती हैं। जब गेहूँ की फसल पककर काटने के लिए तैयार होती है, उसी समय वर्षा या ओले पड़ जाने से या तेज हवा चल जाने से पूरी की पूरी फसल नष्ट हो जाती है। फलस्वरूप अनावृष्टि या सूखे के दुष्परिणामों से वे स्वयं की रक्षा करने में असमर्थ रहते हैं। इसी प्रकार धान की फसल कम वर्षा होने के कारण बेकार हो जाती है। वर्षा कम होने से धान का उत्पादन कम होता है तथा धान की गुणवत्ता कम हो जाती है। इसी प्रकार आलू, मटर, अरहर आदि की फसल को भी बहुत नुकसान पहुँचता है।' 'यहॉ के किसान साधारणतया जुताई के पूर्व खेत की समुचित रूप से सफाई नहीं करते और फलस्वरूप घास व गहरी जड़ें वाले पौधे खेत में यथावत रहते हैं। यहॉ तक कि अनुभवी किसान भी इस ओर से उदासीन है तथा जुताई के पूर्व की तैयारियों में कम से कम मेहनत करते हैं। यही कारण है कि दोषपूर्ण प्रारम्भिक तैयारियों के कारण खेतों की जुताई ठीक प्रकार से नहीं हो पाती और उपज कम होती है। कृषकों द्वारा प्रयुक्त परम्परागत जुताई के तरीकों के कारण भी कृषि उत्पादकता पर बुरा प्रभाव पड़ता है। अभी भी बहुत से क्षेत्रों में कृषि परम्परागत तरीकों से की जाती है। जिसमें जुताई के लिए अनुपयुक्त हल का प्रयोग होता है। खेतों में प्रयुक्त हल गहरी जुताई नहीं कर पाते और न ही भूमि में स्थित कॉटों या प्राकृतिक जड़ों को समूल नष्ट ही कर पाते हैं। इसके अतिरिक्त दुर्बल पशु गहरी जुताई करने में असमर्थ होते हैं। जिसके कारण अच्छी फसल उत्पादकता पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

पशुओं की हीनावस्था भी निम्न कृषि उत्पादकता का एक प्रमुख कारण है। पूर्वी एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश की कृषि में गाय, बैल आदि पशुओं का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि उनसे न केवल गोबर तथा मल–मूत्र के रूप में उत्तम खाद मिलती है, बल्कि संकटकाल में किसान गौ का दूध बेचकर जीवन निर्वाह कर सकता है, किन्तु यहॉ के गौ तथा बैल की सामान्य स्थिति अच्छी नहीं है। अतः न तो बैल किसान के लिए खेती करने में पर्याप्त सहायक हो सकते हैं, और न ही गौ उनके आर्थिक संकटकाल के समय समुचित आर्थिक सहयोग प्रदान कर सकते हैं। निरन्तर क्षरण तथा शक्ति ह्रास के फलस्वरूप भूमि की उत्पादन शक्ति बहुत कम हो गयी है। भूमि के अभाव में यह सम्भव नहीं है कि प्रति वर्ष कृषि भूमि का तृतीयांश अथवा चतुर्थांश खाली छोड़ा जा सके। अतः निरन्तर क्षरण तथा शक्ति ह्रास निम्न उत्पादकता को प्रभावित करने वाले घटकों में से एक है। साख की कमी भी निम्न उत्पादकता का एक प्रमुख कारण है। उचित साख व्यवस्था न होने के कारण किसानों को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। ऊँची ब्याज दरों पर ऋण लेना पड़ता है जिससे वे ऋणग्रस्त हो जाते हैं। कभी–कभी उन्हें समय पर ऋण नहीं मिल पाता है, जिसके कारण बीज, खाद अथवा अन्य आवश्यक वस्तुएँ प्राप्त करने में उन्हें कठिनाई होती है, जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव कृषि उत्पादिता पर पड़ता है।

कृषि जोतों के छोटे होने की समस्याः–

'पूर्वी और पश्चिमी उत्तर प्रदेश की कृषि समस्याओं में एक मुख्य समस्या कृषि जोतों के छोटे होने की है। ''जोतों के उपविभाजन एवं अपखण्डन के कारण कृषि उत्पादिता पर बुरा प्रभाव पड़ता है। जोतों के उपविभाजन से आशय खेतों के उन छोटे–छोटे टुकड़ों से है, जो भूमि विभाजन के कारण अत्यन्त छोटे आकार के हो गये हैं। भूमि पर जनसंख्या का अधिक दबाव, गरीबी और बेरोजगारी, वैकल्पिक रोजगार अवसरों की कमी, भूमि की कमी और भूमि के अत्यधिक लगाव के कारण परिवार के प्रत्येक सदस्य भूमि से अपना हिस्सा चाहते हैं। संयुक्त परिवार प्रणाली क्षीण होने तथा एकाकी परिवार की प्रवृत्ति बढ़ने के कारण प्रत्येक व्यक्ति अपने लिए पृथक–पृथक भू–क्षेत्र चाहता है। इन सब कारणों से कृषि अर्थव्यवस्था में उपविभाजन की समस्या बढ़ी है। अपखण्डन से तात्पर्य किसी कृषि जोत के उन टुकड़ों से होता है, जो एक साथ मिले न होकर दूर–दूर तक बिखरे व छिटके होते हैं, अपखण्डन के कारण कृषक का एक खेत का एक स्थान पर न होकर दूर–दूर बिखरे होते हैं। एक ही कृषक की भूमि कुछ गॉव के एक किनारे और कुछ दूसरे किनारे पर होती है। सामान्यतया यह होता है कि परिवार के मुखिया की मृत्यु के बाद उत्तराधिकार नियम के कारण प्रत्येक भू–खण्ड से अपना हिस्सा चाहते हैं। इससे समस्या अधिक जटिल हो जाती है। पूर्वी उत्तर प्रदेश में यह समस्या अधिक

गहन रूप से विद्यमान है, क्योंकि यहाँ के अधिकांश कृषक अभी भी अशिक्षित, रूढ़िवादी एवं परम्परावादी है।'
'कृषि जोत छोटी होने के कारण सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था पर घातक परिणाम उत्पन्न होते हैं। उपविभाजन के कारण भूमि बाड़ लगाने और गेट बनाने में नष्ट होती है। खेतों की संख्या जितनी अधिक होगी उतनी ही अधिक भूमि इसमें नष्ट होगी। जब खेतों का आकार अत्यन्त छोटा हो जाता है, तो उस पर कृषि कार्य करना सम्भव नहीं रह जाता। खेत का आकार छोटे होने पर कृषि लागत बढ़ जाती है। कृषकों को कृषि कार्य हेतु विभिन्न उपकरण लेने होते हैं, जबकि उनका छोटी जोत पर पूर्ण क्षमता का उपयोग नहीं हो पाता है। इस प्रकार पूँजी और श्रम का अपव्यय होता है। कई ''आधुनिक कृषि यन्त्र का प्रयोग तो अत्यन्त छोटी आकार की जोत पर किया ही नहीं जा सकता है। वे छोटी जोत के सन्दर्भ में अनार्थिक हो जाती हैं। इस प्रकार जोत का आकार कृषि उत्पादन तथा कृषि पद्धति को महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित करता है। कृषि उत्पादन के लिए श्रम एवं अन्य साधनों के साथ भूमि का एक उपयुक्त अनुपात भी होना चाहिए। अपखण्डित तथा छोटे खेतों पर खेती करके उत्पादन बढ़ाना सहज नहीं है। पूर्वी और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में छोटी जोत की समस्या होने के कारण किसान कृषि की नई उन्नत तकनीक अपनाने से हिचकिचाते हैं। इससे किसान भरपूर उत्पादन नहीं कर पाते हैं और कृषकों के लिए खेती घाटे का सौदा सिद्ध होता है।

पौध संरक्षण की समस्याः–

कृषि आगतों में पौध संरक्षण भी एक प्रमुख आगत है। यदि फसलों को कीटाणुओं व रोगों से न बचाया जाये तो इससे उत्पादन को बहुत हानि होती है। पूर्वी एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश में विभिन्न प्रकार के कीट व रोगों का प्रकोप है, जिसमें से कुछ प्रमुख का वर्णन निम्नलिखित हैः–

गेहूँ की प्रमुख बीमारियाँ व कीड़ेः–'गेहूँ के पौधे को अधिक नुकसान दीमक व गुजिया नामक कीटों द्वारा होता है। इसके अतिरिक्त गेहूँ में प्रायः गेरूई, कण्डुआ, करनालबण्ट, पहाड़ी बण्ट रोहू रोग लगते हैं। इनमें लाल या भूरी गेरूई, पीली गेरूई व काली गेरूई जो पत्तियों व तने के ऊपर पाउडर के रूप में दिखायी देती है, के प्रकोप से गेहूँ की पैदावार घट जाती है। कण्डुआ रोग ग्रसित पौधे की बालियाँ काली व काले पाउडर से ग्रसित होती हैं। उन बालियों में दाने नहीं आते हैं। करनाल बण्ट बीमारी दानों पर काले चूर्ण के रूप दिखायी देती है। काला पाउडर विषाक्त होता है तथा स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है। इस प्रकार ये विभिन्न प्रकार के कीड़े व रोग गेहूँ की फसल को बुरी तरह प्रभावित करते हैं।

गन्ने की प्रमुख खर–पतवारः– गन्ने में रबी, खरीफ और जायद सभी मौसमों के खर–पतवार उगते हैं। गन्ने की फसल में खर–पतवार फसल की तुलना में 5.8 गुना नाइट्रोजन, 7.8 गुना फास्फोरस एवं तीन गुना पोटाश उपयोग करते हैं। खर–पतवार नमी का एक बड़ा हिस्सा शोषित कर लेते हैं तथा फसल को आवश्यक प्रकाश एवं स्थान से भी वंचित रखते हैं। खर–पतवार फसलों में लगने वाले कीटों एवं रोगों के जीवाणुओं को भी आश्रय देते हैं। खर–पतवारों की संख्या एवं प्रजाति के अनुसार गन्ने की पैदावार में 14 से 75 प्रतिशत तक की कमी ऑकी गयी है तथा चीनी की मात्रा व गुणवत्ता में भी कमी आयी है।

टमाटर के कीट व बीमारियाँः– विटामिन 'ए' तथा 'सी' से भरपूर टमाटर विभिन्न प्रकार के हानिकारक कीट व व्याधियों से ग्रसित हो जाने के कारण गुणवक्ता तथा उपज दोनों ही प्रभावित हो जाती हैं। इसमें विभिन्न प्रकार के रोग जैसे डैम्पिंग आफ, अगेती झुलसा, पिछेती झुलसा, वक ऑख, फल सड़न, लीफकर्ल, उकठा रोग इत्यादि हो जाने के कारण टमाटर के उत्पादन पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

बैगन के रोगः– बैगन के पौधों में विभिन्न प्रकार के रोगों जैसे फोमोपसिस झुलसा, चकता रोग, झुलसा रोग, लिटिल लीफ से ग्रसित होने कारण बैंगन की पत्तियाँ मुरझा जाती है तथा फल भी सूखने लगते हैं।

राई सरसों की फसल के प्रमुख रोग व कीटः–राई व सरसों की फसल के प्रमुख रोग व कीट हैं– अल्टर नेरिया झुलसा, सफेद गेरूई एवं तुलासिता, आरा मक्खी एवं माहू। इन विभिन्न प्रकार के रोगों से फसल तो बुरी तरह से प्रभावित होती है साथ ही साथ पूर्वी एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश की कृषि को बहुत हानि होती है तथा उत्पादन कम होने लगता है।'

भू–संरक्षण की समस्याः–'किसी भूमि पर लगातार खेती करने से उसकी उत्पादन शक्ति में ह्रास हो जाता है। इसे ही भू–क्षरण कहा जाता है। निरन्तर प्रयोग होते रहने के कारण भूमि की उर्वरा शक्ति कम हो जाती है, जिस कारण निम्न उत्पादकता प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त जब वर्षा के कारण भूमि की ऊपरी सतह के कण बह जाते हैं तो उसके साथ–साथ भूमि के उर्वरक भी कुछ मात्रा में बह जाते हैं, जिससे भूमि की उत्पादन शक्ति कम हो जाती है और परिणामस्वरूप निम्न उत्पादकता प्राप्त होती है। ''मनुष्य ने अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वनों से अधिकाधिक वृक्षों की कटाई भूमि की जुताई एवं कृषि कार्य पशुओं द्वारा चराई इत्यादि कार्य प्रारम्भ कर दिया। इस प्रकार भू–सतह

पर स्थित प्राकृतिक छत्र की हानि पहुंचायी गयी जिसके फलस्वरूप प्राकृतिक संतुलन बिगड़ गया है और भूमि निर्माण से भूमि हानि की गति अधिक हो गयी है।

अतः स्पष्ट है कि उत्तर प्रदेश के पूर्वी एवं पश्चिमी क्षेत्रों में कृषि से सम्बन्धित विभिन्न समस्याएँ विद्यमान हैं। जिससे कि यहाँ की कृषि पिछड़ी अवस्था में है, किन्तु व्यवहारिक रूप से जो कारण इन क्षेत्रों की कृषि के पिछड़ेपन के लिए उत्तरदायी है, वो है कृषकों की अज्ञानता। यहाँ के कृषक अज्ञानता के कारण भूमि की उर्वरता व आवश्यकता का ज्ञान नहीं होता है और वे अधिक उत्पादन प्राप्त करने की लालसा में प्रत्येक वर्ष समान प्रकार उर्वरक प्रयोग किये जाते हैं। जैसे– भूमि में फास्फेट अधिक है और कृषक को इस बात का ज्ञान नहीं है। फास्फेट की अधिकता के बाद भी वो प्रतिवर्ष उसका प्रयोग करता जाता है।

अज्ञानता के कारण ही वे विपणन व्यवस्था का पूरा लाभ नहीं उठा पाते हैं। इसके अतिरिक्त वे कृषि कार्य में नवीन तकनीक के महत्व व उपयोगिता को भी नहीं समझ पाते हैं तथा कृषि को यंत्रीकरण की समस्या का सामना करना पड़ता है। सिंचाई की समस्या के लिए काफी हद तक यहाँ के कृषकों की अज्ञानता ही जिम्मेदार हैं। यदि यहाँ के कृषकों में अज्ञानता न होती तो आज भी वे कृषि के लिए पूर्णतः मानसून पर निर्भर न होते। कृषि विकास में इन सभी समस्याओं के अतिरिक्त और भी अन्य समस्याएं हैं जो कृषि के विकास में मुख्य रूप से बाधक हैं। अतः यदि कृषि उत्पादिता में वृद्धि लाना है तो आवश्यक है कि मुख्य रूप से कृषकों की अज्ञानता को दूर किया जाए एवं उनको जागरूक बनाया जाए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. पूर्वी उत्तर प्रदेश के आर्थिक पिछड़ेपन के कारणों का मूल्यांकन एवं विकास की सम्भावनाएँ:
2. स्वपनम् दूबे, पृ0 180
3. उत्तर प्रदेश में ग्रामीण विकास के लिए नई कृषि से सम्बन्धित समस्याएँ एवं सम्भावनाएँ:
4. अन्सारी मोहम्मद अली, पृ0 59
5. उत्तर प्रदेश में ग्रामीण विकास के लिए नई कृषि से सम्बन्धित समस्याएँ एवं सम्भावनाएँ:
6. अन्सारी मोहम्मद अली, पृ0 60
7. पूर्वी उत्तर प्रदेश के आर्थिक पिछड़ेपन के कारणों का मूल्यांकन एवं विकास की सम्भावनाएँ:
8. स्वपनम् दूबे, पृ0 165
9. सिंचाई एवं जलोत्सरण के सिद्धान्त– डा0 महातिम एवं शिवराज सिंह, पृ0 325, 341, 344
10. उत्तर प्रदेश के ग्रामीण विकास के लिए नई कृषि से सम्बन्धित समस्याएँ एवं सम्भावनाएँ–
11. अन्सारी मोहम्मद अली, पृ0 53
12. खेत–खलिहान, दिसम्बर– 2004, दैनिक जागरण, पृ01, डा0 जे0ए0 मिश्र एवं डा0 वी0पी0
13. सिंह राष्ट्रीय खर–पतवार विज्ञान अनुसंधान केन्द्र मध्य प्रदेश।
14. मिश्र जे0पी0 भारतीय अर्थव्यवस्था, मिश्रा ट्रेडिंग कारपोरेशन, वाराणसी–2003
15. सांख्यिकी सारांश उत्तर प्रदेश, अर्थ एवं संख्या प्रभाग राज्य नियोजन संस्थान, उत्तर प्रदेश,
16. 1986, 1990, 1995, 2000, 2003 एवं 2011
17. गुप्ता प्राची (2013) पूर्वी तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश के कृषि विकास का तुलनात्मक अध्ययन,
18. पी0एच0डी0 थिसीस, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर।
19. उत्तर प्रदेश की आर्थिक समीक्षा अर्थ एवं संख्या प्रभाग राज्य नियोजन संस्थान उत्तर प्रदेश– 2010–11
20. Eleventh five year and annual plan 2007-08, Vol-I, Government of India Uttar Pradesh 2010 based on the fact of 2009-10
21. Development report of Uttar Pradesh Vol-II, 2007, Planning Commission Government of India
22. Draft six five year plan Vol.II, Uttar Pradesh (Planning Commission Uttar Pradesh)
23. Nag, D.S. Problems of under developed Economies, Laxmi Narayan Agrawal, Educational Publishers, Agra, 1962
24. Rai Chaudhary, S.P. Soils of India, National book trust New Delhi, 1962.